Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 6.471
Volume - 6, Issue - 4, April - 2023 Publication Date: 30/04/2023

DOIs:10.2018/SS/202304014 --:-- Research Paper / Article / Review

इक्कीसवीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों की कहानियों में वैचारिक आधार: स्त्री और राजनीतिक चेतना

[1] डॉ. राकेश चन्द्र, [2] रेनू
[1] एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जे0वी0 जैन कालेज, सहारनपुर (उ0प्र0)
[2] शोध छात्रा, हिन्दी विभाग जे0वी0 जैन कालेज, सहारनपुर (उ0प्र0)
E-mail : dr.chandra1976@gmail.com E-mail : akshat.dhiman.09@gmail.com

सारांश: राजनीतिक परिवेश के प्रति जागरूकता आना ही साधारणतः राजनीतिक चेतनता है। मनुष्य को अपने सर्वांगीण विकास के लिये अपने अधिकारों का ज्ञान और उन्हें प्रयोग करने का तरीका भी आना चाहिए और नारियों के लिये तो ये अति आवश्यक भी है कि वो पीढ़ियों से चली आ रही स्थितियों से बाहर आने के लिये अपने राजनीतिक अधिकारों को प्रयोग करने के साथ-साथ राजनीति से भी सीधे तौर पर जुड़े। ज्ञान एवं व्यवसाय के अन्य क्षेत्रों के साथ इस क्षेत्र के साथ भी जुड़े।

मुख्य शब्द: स्त्री, राजनीतिक क्षेत्र, राजनीतिक चेतनता, महिलाओं की भागीदारी, हिम्मत, साहस।

जीवन में आने वाली अनेक समस्याओं का कारण राजनीति होती है और राजनीति को अच्छी तरह से समझकर, जानकर ही कोई भी अपनी समस्याओं का निराकरण कर सकता है। इस प्रकार राजनीति को समझकर अपनी समस्याओं का निराकरण करना ही राजनीतिक चेतनता है। उदाहरणार्थ संविधान की स्थापना से पहले भारतीय समाज ऊँच-नीच, छोटे-बड़े आदि अनेक अनैतिक, असंवैधानिक कुचक्रों में फँसा हुआ था। समाज पर भाग्यवादिता हावी थी। अपनी गरीबी या जाति का कारण व्यक्ति अपने पूर्व जन्म या भाग्य को मानता था, किन्तु संवैधानिक अधिकारों की स्थापना के बाद आई राजनीतिक चेतनता ने समाज को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक किया। संविधान द्वारा प्राप्त संवैधानिक अधिकारों ने विकास के अवसर उपलब्ध कराये एवं उपलब्ध अवसरों का लाभ लेना सिखाया। पित्तसतात्मक समाज में राजनीतिक समझ पर पुरूषों का ही अधिकार समझा गया। यद्यपि स्त्री-पुरूष दोनों ही समाज के दो अटूट हिस्से हैं, इसके बावजूद भी स्वतन्त्रता के इतने वर्षों बाद भी राजनीतिक परिदृश्य पर महिलाओं की उपस्थिति अब भी कम ही है। आज जीवन के हर क्षेत्र में, ज्ञान और कौशल में जब महिलाएं पुरूषों की बराबरी कर रही हैं और कुछ क्षेत्र तो ऐसे भी हैं, जहाँ पर वो पुरूषों को पीछे भी छोड़ चुकी हैं, तब भी राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी का कम होना चिन्तनीय है।

राजनीति में महिलाओं की सहभागिता के लिए अनेक प्रयास संविधान में किए गए हैं। महिलाओं को सशक्त बनाने के लिये आवश्यकता इस बात की भी है कि जो योजनायें महिलाओं के लिये चलायी जाएं, जो नीतियाँ नारियों के लिये बनायी जायें, उनके बनाने व चलाने में महिलाओं की बराबर की भागीदारी हो और बराबर की भागीदारी के लिये आवश्यक है कि महिलायें राजनीति में सीधा हस्तक्षेप करें। इसके लिये महिलाओं को राजनीति के नीचे के पायदान से लेकर ऊपर के पायदान तक अपनी पहुँच बनानी होगी, तभी वो अपनी बात को उचित एवं सशक्त रूप से कह सकती हैं। हमारा समाज महिलाओं को नेतृत्व के योग्य ही नहीं समझता, इसीलिए राजनीतिक दल महिलाओं के लिए बड़ी-बड़ी बातें तो करते हैं, किन्तु उनको नेतृत्व देना उचित नहीं समझते और हिचकिचाहट दिखाते हैं। महिलाओं की प्रतिभा और समझ का प्रयोग समाज और राष्ट्र के लिए ना करके उन्हें केवल दोयम कार्यों के योग्य समझना, अन्यायपूर्ण है। यदि ऐसा होता है तो राष्ट्र अपने आधे नागरिकों की सेवाओं और योग्यताओं से वंचित हो जाता है। कुछ ऐसी ही मान्यता मृणाल पाण्डे की भी है।

"यदि स्त्रियाँ सचमुच लोकतन्त्र की सार्थक शक्ति बनना चाहती हैं, तो अब समय आ गया है कि लोकतन्त्र में स्थायित्व और पारदर्शिता चाहने वाले सभी संगठनों तथा चुनाव आयोग के साथ मिलकर वे राजनीति की ऊर्जा को सही उम्मीदवारों तथा साफ-

सुथरे संगठनों की मार्फत लगातार एक ऐसी ताकत में तब्दील करने में जुट जाएं, जिसके मूल में सच्चे सलाहकार की भावना हो, वहशी लोलुपता नहीं।"[1]

लोकतन्त्र की सफलता भी इसी बात पर निर्भर करती है कि महिलाओं को पुरूषों के समान राजनीतिक अधिकार प्राप्त भी हो, वो उसका प्रयोग भी करना जानती हो, किन्तु भारतीय महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में ये पूर्णतया सत्य नहीं हो पाया है, क्योंकि महिलायें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं हो पायी हैं। उनमें अपना भला-बुरा सोचने की सामथ्र्य नहीं है और वो अपने निर्णय लेने में पूर्णतया सक्षम नहीं हैं। पुनः वर्षों से चली आ रही परम्पराओं के कारण भी महिलायें राजनीतिक निर्णय नहीं ले पाती हैं। भारतीय समाज में स्त्री को पुरूष के समान बनाने वाले कानून भी क्रियाशील नहीं हो पाते, कारण भारतीय समाज रूढ़िवादिता में जकड़ा हुआ है। आजादी के बाद समाज में बहुत परिवर्तन आया है, तब भी भारत में राजनीति की ओर स्वेच्छा से आकृष्ट होने वाली महिलायें आज भी संख्या में कम ही हैं, जबकि आर्थिक स्वावलम्बन के कारण पाश्चात्य जगत की औरतें राजनीतिक जीवन शुरू कर रही हैं, जो सही भी है एवं समय की माँग भी है। मृणाल पाण्डे के विचार भी इसी ओर संकेत कर रहे हैं।

"राजनैतिक विश्व के तमाम नकारात्मक तेवरों के बावजूद दुनिया भर की औरतों का राजनैतिक वजन और समझ बढ़ती जा रही है। मिस्र की मशहूर लेखिका नवाल-अल-सदावी के शब्दों में - "जब इक्यावन फीसदी समाज उन औरतों से बना है, जो युद्ध, बेरोजगारी, गरीबी या उपनिवेशवाद की विभीषिका सबसे पहले और सबसे ज्यादा लम्बे अर्से तक झेलती हैं, तो फिर वे राजनीतिक गतिविधियों पर लाख कमजोर हों तो भी खुली चर्चाएं क्यों न करें।"[2]

आज आवश्यकता इस बात की भी है कि नारी जगत अपनी तमाम समस्याओं पर विचार करे। उन समस्याओं का कारण जाने और उनके निराकरण करने के उपायों पर विचार करे। आधा समाज होने के बावजूद नारियाँ जितनी प्रताड़ना, यातना या दोयम बर्ताव सह रही हैं वो अन्यायपूर्ण है। आज की नारी में इतना साहस भी आ गया है कि वो उस अन्यायपूर्ण बर्ताव के खिलाफ जा सके, जो रिश्ता उसके पैरों में मर्यादा और जिम्मेदारियों की अनावश्यक बेड़ी डालकर उसकी प्रतिभा और इच्छा को अपनी खुशी के लिये बलि चढ़ाना चाहता हो, वो उस रिश्तें को ही छोड़कर आगे बढ़ सके। कहानी 'कत्थई नीली धारियों वाली कमीज' की नायिका वर्षो बाद अपने प्रेमी को अपनी पसंद की कमीज पहने देखकर खुश होती है, उसे लगता है, जैसे वो सिर्फ उसके लिये ही वापस आया है, किन्तु अपने प्रेमी के विचार और सोच जानकर उसके मन की कोमलता कड़वाहट में बदलने लगती है, क्योंकि उसका प्रेमी उसे सब चीजों से हटाकर केवल घर की भीतरी दुनिया तक बाँधने की चाह में उस तक आया है।

"स्त्री दुनिया-जहान की बात कर ही ना पाए! यह कैसा प्रेम! कि स्त्री दुनिया बाहर रखकर, बस एक तय की गई स्त्री रूपा बनकर ही अपने प्रेमी से बतियाए, फिर बातें कितनी कम, कितनी सीमित होंगी और कुछ दिनों में कितना बोरिंग हो जाएगा ऐसा साथ।"[3]

जो रिश्ता नारियों को खूँटे से बाँधकर रखना चाहता हो। आज नारियाँ उस रिश्ते को ही छोड़ना पसन्द करती हैं। ये उनमें जागी वो भावना है, जो उन्हें समानता और अस्तित्व का बोध कराती है।

स्वतन्त्रता और अपने अस्तित्व को प्राप्त करने की चाह ने नारियों को आगे बढ़ने और संघर्ष करने को प्रेरित किया, किन्तु इस आगे बढ़ने की चाह ने नारियों को उनके खून के रिश्तों से दूर कर दिया। दूसरों के दुःखों को दूर करने, उनके अधिकारों के लिए संघर्ष करने को जब भी नारी ने आगे कदम बढ़ायें हैं, तब उसके अपनों ने ही उसे पीछे हटने को विवश करना चाहा है और किया भी है। स्वजन ही नारी के मार्ग के बाधक बनते रहे हैं। जैसे- 'चिड़िए पंख लगा के उड़ जा' की मणिका गरीब और वंचित आदिवासियों के हितों की रक्षा के लिये तमाम खतरों को उठाती है, किन्तु उसके अपने ही उसे छोड़ते चले जाते हैं।

"मेरी जिन्दगी जोखिमों से भरी थी, खासकर कोयला मजदूरों की ट्रेड यूनियन की लीडर होने के नाते, खतरे ही खतरे थे, लेकिन मजदूरों का अथाह विश्वास, अनन्त प्यार, अगाध उदारता की तीव्र धारा, उस घृणा, उपेक्षा की भरपाई कर देती थी। मैं खतरों को नकार देती थी, खतरे ही डर जाते थे, मेरे आत्मविश्वास से।"[4]

अत्याचारों के खिलाफ नारियों की एकजुटता ने ना सिर्फ अत्याचारों को रोका, बल्कि समाज की सोच को भी परिवर्तित कर दिया। एक समय नारी अत्याचारी से डरकर सहम जाती थी, किन्तु आज वो ना सिर्फ ज्यादतियों का विरोध करती है, बल्कि दूसरी नारी के खिलाफ ज्यादती होता देखकर आवाज भी उठाती है।

समाज में नारियों को अपने खिलाफ होने वाली अन्यायपूर्ण बातों का विरोध जब कानूनों और राजनीतिक नीतियों के आधार पर होगा, तभी अत्याचारी के मन में भय उत्पन्न होगा और यह तभी सम्भव होगा, जब नारियाँ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हों।

जैसे- 'पुष्पक विमान' कहानी में एयर पुलिस एक नारी को जबरदस्ती खींचे चली जा रही थी कि तभी एक अन्य महिला यात्री उसके लिए उठकर खड़ी होकर पुलिस का विरोध करती है और उसकी बात सुनकर अन्य यात्री और पुलिस हतप्रभ रह जाती है।

"इससे पहले कि उसका पति उसे हाथ खींचकर बैठाता, वह तेजी से अपनी सीट से निकली और लड़की की तरफ झपकी, तब तक कोई नहीं छुएगा, इसे वरना अखबारों को दे दूँगी, मानवाधिकार वालों को बुलाऊँगी, महिला आयोग को बताऊँगी, आर0टी0आई0 में माँगूगी, तुम्हारे नियम, कानून, जनता को क्या बताया है तुम लोगों ने ? क्या छुपाया ? सब पता चल जायेगा। एक प्रेगनेंट औरत को इस तरह खींचते ले जाने का ये कौन सा तरीका है ? हटो, हटो, तुम सब।"[5]

स्वयं नारी जब दूसरी नारियों की मदद करेगी और उनके लिये खड़ी होकर अन्याय का विरोध करेगी, दूसरों को भी ऐसा करने के लिये प्रेरित करेगी, तभी नारी शक्ति का रूप धारण कर सकती है और समाज को बदलने का प्रयास कर सकती है और इसके लिए आवश्यकता राजनीतिक चेतनता की पड़ेगी। ऐसा ना होने पर नारी केवल दूसरों के हाथ की कठपुतली बनकर अपने जैसी अन्य नारियों की राह का रोड़ा बनती रहेगी और ये पुरूष प्रधान समाज यही कहता रहेगा कि एक नारी ही दूसरी नारी की सबसे बड़ी शत्रु है। जैसे- 'फादर' कहानी की शालिनी वर्मा जो अपनी विद्यार्थियों को अच्छा नागरिक और कभी हार ना मानने की प्रेरणा देती है, किन्तु वही लड़की उसकी अन्य सह अध्यापिकाओं की नजरों में चुभने लगती है और उसकी लोकप्रियता राजनीतिक दलों को। वो सब उसके खिलाफ तरह-तरह के षड़यंत्र रचने लगते हैं और सभी मिलकर उसे उस जगह से दूर करने में लग जाते हैं।

"देखते-देखते यह बात पूरे स्कूल में ही नहीं, पूरे शहर का मुद्दा बन गई थी। अखबारों ने इसे खूब उछाला था। अध्यापिकाओं ने मेरे खिलाफ धरना दिया था। कई राजनीतिक दलों ने कहा था कि मैं मिशनरी और उससे भी ज्यादा सी0आई0ए0 की एजेन्ट हूँ।--- अध्यापिकाओं ने लड़कियों का ज्ञापन मैनेजमेंट, शिक्षा मंत्री और प्रिंसिपल को दिलाया था।"[6]

राजनीतिक चेतना के बल पर अपने अधिकारों को जानकर अपने खिलाफ होने वाले अत्याचारों एवं शोषण को रोकने वाली ऐसी ही पात्र कहानी 'कुच्ची का कानून' की 'सुघरा' है, जिसके अपने ही उसकी सम्पत्ति की चाह में उसके विरुद्ध अन्यायी हो जाते हैं, किन्तु वो सुघरा की हिम्मत और साहस को नहीं तोड़ पाते, जिसके बल पर सुघरा अपने संवैधानिक अधिकारों को जानकर अपनी एवं अपनी सम्पत्ति की रक्षा कर पाती है। अपनी इस जीत के बाद वो अन्य नारियों की सहायता करती है। उसके हिसाब से नारियों पर अत्याचार का कारण पुरूष का अहं और सम्पत्ति पर एकाधिकार है, जिसके कारण वो नारी को उपभोग की वस्तु समझता है। आदमी का ये नारी को वस्तु या जायदाद समझने वाला दृष्टिकोण ही नारी के प्रति अन्याय को बढ़ाने वाला है। पुरूष का स्त्री को सम्पत्ति समझना जब तक नहीं बदलेगा, तब तक नारी को समान अधिकार प्राप्त नहीं होंगे। अपने समान अधिकारों की प्राप्ति के लिये नारी को राजनीतिक ज्ञान और सक्रियता को बढ़ाना होगा।

"फिर सुघरा कहती है - पंचों, कई साल तक थाना कचहरी दौड़ने और परधानी करने के बाद यही समझ में आया कि सारे झगड़े की जड़ प्रापर्टी है। आदमी की नजर में औरत खुद प्रापर्टी है।--- जो जमींदारी विनाश कानून हमारे यहाँ सन् 1952 में लागू हुआ, वह सिर्फ मर्द को पहचानता है। खेत का सारा मालिकाना हक वह मर्द को देता है। औरत सरकार की नजर में गोबर का चोत है।"[7]

नारियों को स्वयं के लिए और अपने आने वाली पीढ़ियों के लिये राजनीतिक भागीदारी बढ़ानी होगी। आधा समाज नारियों का होने के बावजूद राजनीतिक दृष्टि से नारियों की पहुंच राजनीतिक क्षेत्र में मुश्किल से 11-15 प्रतिशत ही है, यही कारण है कि नारियों के हितार्थ और उनकी समस्याओं पर राजनीतिक शक्तियों का उतना सशक्त ध्यान नहीं जाता, जितना जाना चाहिए। इन सबके बीच सुखद बात ये भी है कि देर से ही सही नारियाँ अब इस दिशा में जागरूक हो रही हैं। राजनीतिक क्षेत्र में अब धीरे-धीरे महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है। पहले महिलाएं यह समझती थी कि उन्हें आज तक जो प्राप्त नहीं हुआ, ये उनकी किस्मत है और उनकी अगली पीढ़ी को निश्चित तौर पर वो सब कुछ प्राप्त हो जायेगा, किन्तु निश्चित तौर पर अगली पीढ़ी को सब कुछ केवल तभी प्राप्त हो सकता है, जब ये पीढ़ी हर गलत और अन्यायपूर्ण बात के लिये विरोध करे और उसमें बदलाव लाने के लिये संघर्ष करे। उस दौर में बेशक संघर्ष करने वाली महिलाओं की संख्या कम थी, तब भी उन्होंने संघर्ष किया और सिर्फ पुरूषों का ही नहीं, बल्कि महिलाओं के विरोधों को भी सहा। ऐसी औरतों को जिन्होंने संघर्ष किया, उन्हें घर तोड़ने वाली तक की संज्ञा दी गई, फिर भी उन्होंने स्वयं को खाद समझकर ही उपजाऊपन लाने का कार्य किया।

नारियों को स्वतन्त्रता और समानता के मायने भी समझने हैं। कड़े संघर्ष के बाद मिलने वाली समानता और स्वतन्त्रता को तुच्छ वस्तुओं के समान नहीं समझना चाहिए, क्योंकि पुरूषों के समान उन्हें यह सब सहज रूप से प्राप्त नहीं हुआ। आज भी अधिकांश नारियों को इनके लिये बहुत कुछ सहना पड़ता है, लड़ाई लड़नी पड़ती है। आज के पढ़े-लिखे समाज में भी नारियों को

मानव जाति का हिस्सा होना सिद्ध करना पड़ता है। ये साबित करना पड़ता है कि वो कोई वस्तु नहीं, बल्कि एक जीवित मानव हैं। उसे भी सम्मान, सुख, समानता की अभिलाषा है और ये उसके अधिकार भी हैं।

सदियों की दासता ने नारियों को अन्य व्यक्तियों को भी मानव समझना सिखाया है, जबकि पुरूषों के अहं के कारण उनमें ये प्रवृत्ति नहीं आ पायी है। जैसे कहानी 'नंदीग्राम के चूहे' की रेनू दी। उनकी कही ये बातें और उसके विचार नारियों के समभाव की व्याख्या ही करते हैं।

"चेहरा तमतमा गया रेनू दी का - जैसे नंदीग्राम के सारे चूहे उनके चेहरे से चिपक चुनचुना रहे हों। तल्ख स्वरों में कहा उन्होंने, "इस बिल्ली की टाँग तो हम तोड़ देंगे। बस, जनता जरा सा साथ दे दे।"[8]

जब राजनीतिक दलों को आम जनता चूहे जैसी लगने लग जाये और उस गरीब जनता की मौत उनके लिये तमाशा बन जाये, तब भी नारियाँ ही हैं, जिन्हें राजनीतिक दलों की ये सोच नागवार लगती है और वो इसके खिलाफ एकजुट होने का प्रयास करती हैं।

धीरे-धीरे नारियों की सोच-विचार परिवर्तित हो रहे हैं। ये एक सकारात्मक परिवर्तन है कि शहर से लेकर गाँव तक, बड़े से लेकर छोटे तक हर एक तबके में नारी जाति में उनकी सोच-विचार, कार्यशैली में परिवर्तन हो रहे हैं। नारी ने हर एक क्षेत्र में स्वयं की काबिलियत को साबित किया है। कथित तौर पर पुरूषों का क्षेत्र मानी जाने वाली राजनीतिक प्रक्रिया में आज के समय में महिलायें बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही हैं, न सिर्फ अपने मत का प्रयोग मतदाता के रूप में करने में, बल्कि प्रत्याशी के रूप में, सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में भी नारियाँ बढ़-चढ़कर भागीदारी कर रही हैं। जैसे कहानी 'बनाना रिपब्लिक' की फुलझारी देवी जो गाँव की प्रधानी चुनाव की प्रत्याशी बनकर जी-जान से अपने लिये चुनाव प्रचार कर रही हैं।

"फुलझारी देवी अपनी दोनों भाभियों और तीन भतीजियों के साथ काला छाता लगाकर प्रचार के लिये निकली हैं, कहती हैं पूत न भतार। बेटी ना बेटा। मैं किसक लिए लूट मचाऊँगी। भगवान ने अकेला किया है तो कुछ सोचकर किया है। पब्लिक की सेवा के लिए। सारा गाँव मेरा बाप-भाई है। --- यादव टोले की किसी दुलहिन ने पूछा- जीत गई तो प्रधानी कैसे करोगी बुआ ? कुर्सी पर बैठकर करेंगे दुलहिन। सीना ठोककर करेंगे। सीने पर मुक्का मारकर बुआ ने बताया - मेरे जीते जी गाँव का हिस्सा हाकिम लोग खाकर दिखावें जरा! पेट में हाथ डालकर निकाल लाऊँगी। उसका भाषण सुनने के लिए औरतों की भीड़ लग जाती है।"9

नारियों की सोच राजनीतिक क्षेत्र को लेकर बदल रही है। तमाम संगठनों, राजनीतिक प्रयत्नों, महिला संगठनों, समाज सुधारकों आदि के संगठित प्रयत्नों के आधार पर महिलाओं में राजनीतिक चेतना आई है, किन्तु अभी भी इस दिशा में और ज्यादा सुधार की आवश्यकता है। नारियों के और भी ज्यादा शिक्षित और जागरूक होने की जरूरत है। आवश्यकता अधिक इस बात की है कि महिलायें स्वयं अपने लिये संगठित हों और अपने अधिकारों के लिये खड़ी हों। आज भारतीय संसद में महिला सदस्यों की संख्या 103 हो गई है, जिसमें निचले सदन यानि लोकसभा में 78 और उच्च सदन यानि राज्यसभा में 25 महिला सांसद हैं। इस समय संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 14 प्रतिशत है। आज के दौर में मताधिकार का प्रयोग करने वाली महिलाओं की संख्या में तो बढोत्तरी हुई है, किन्तु उस रूप में महिला उम्मीदवारों की संख्या में बढ़ोत्तरी नहीं हुई है। इस दिशा में महिलाओं को अभी और भी ज्यादा प्रयास करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1. परिधि पर स्त्री, मृणाल पांडे, राधा कृष्ण प्रकाशन वर्ष 2017, प्रथम संस्करण पेपरबैक्स, पृ0 सं0 28.
2. वही, पृ0 30.
3. स्याही में सुर्खाब के पंख, अल्पना मिश्र, राजकमल प्रकाशन वर्ष 2017, प्रथम संस्करण, पृ0 55.
4. वह जियेगी अभी, रमणिका गुप्ता वाणी प्रकाशन वर्ष 2016, प्रथम संस्करण, पृ0 104.
5. कब्र भी कैदे औ जंजीरे भी, अल्पना मिश्र राजकमल प्रकाशन वर्ष 2012, पहली आवृत्ति 2015, पृ0 108.
6. नेम प्लेट, क्षमा शर्मा, राजकमल प्रकाशन वर्ष 2006, पहली आवृत्ति 2010, पृ0 55.
7. कुच्ची का कानून, शिवमूर्ति, राजकमल प्रकाशन 2016, पृ0 138.
8. चिड़ियाँ ऐसे मरती हैं, मधु कांकरिया, वाणी प्रकाशन 2020, पृ0 34.
9. कुच्ची का कानून, शिवमूर्ति, राजकमल प्रकाशन 2016, पृ0 47.